AISECT UNIVERSITY™

JHARKHAND, HAZARIBAG AN AISECT GROUP UNIVERSITY

Recognized by : UGC

(B.A. History Hon's - Sem III) & Elective Paper

(History of India 1200 AD to 1739 AD)

Contact us:

8252299990

8404884433

AISECT University, Hazaribag

Matwari Chowk, in front of Gandhi Maidan, Hazaribag (JHARKHAND)-825301

www.aisectuniversityjharkhand.ac.in info@aisectuniversityjharkhand.ac.in

(BA 3rd Sem & Elective Paper)

सल्तनतकालीन इतिहास के स्त्रोत

History of India 1200 AD to 1739 AD

सल्तनतकालीन इतिहास के अध्ययन के लिए पुरातात्विक स्रोतों की अपेक्षा साहित्यिक स्रोतों ज्यादा उपयोगी सिद्ध होते है। इस्लाम धर्म के प्रचार–प्रसार के साथ ही अनेक अरब यात्री एवं धर्म–प्रचारक भारत आए। इनलोगों ने भारत के विभिन्न भागों का विवरण अपने ग्रंथो में प्रस्तुतत किया है, जो भौगोलिक एवं ऐतिहासिक अध्ययन के लिए प्रामाणिक जानकारी उपलब्ध कराते है। सिन्ध पर अरबों के आधिपत्य के पश्चात् भारतीय इतिहास से संबंधित ऐतिहासिक साहित्य अधिक मिलने लगते हैं।

स्रोतों का वर्गीकरण – मध्यकालीन भारतीय इतिहास के अध्ययन के लिए जो स्रोतों उपलब्ध है, उन्हे सुविधानुसार दो वर्गो में विभक्त किया जा सकता है– 1. साहित्यिक एवं 2. पुरातात्विक साहित्यिक स्त्रोतो के अंतर्गत सामान्य ऐतिहासिक ग्रंथों, जीवनियों, यात्रा–वृत्तांतो, प्रशासनिक दस्तावेजो आदि का उल्लेख किया जा सकता है। इनके अतिरिक्त, अनेक साहित्यिक रचनाएं, विशेषकर अमीर खूसरो की रचनाएं भी इतिहास के अध्ययन के लिए महत्वपूर्ण है। पुरातात्विक स्रोतों में स्मारको, अभिलेखों एवं सिक्कों का उल्लेख किया जा सकता है।

पुरातात्विक स्रोत – सल्तनतकालीन इतिहास के अध्ययन में पुरातात्विक स्रोतों की भी उपेक्षा नही की जा सकती। इस समय अनेक भवनों का निर्माण हुआ। इस समय के भग्नावशेषों को देखकर तत्कालीन कलात्मक प्रगति एवं राज्य की समृद्धि का अंदाज मिलता है। इस समय की अनेक महत्वपूर्ण इमारतें जैसे 'कुवत–उल–इस्लाम', कुतुबमीनार, अलाई दरवाजा, फीरोजशाह कोटला आदि कलात्मक विकास से हमें परिचित कराती है। सल्तनकाल में मस्जिदों एवं अन्य भवनों की दीवारों पर फारसी में अभिलेख भी खुदवाए गए, परंतु शाही अभिलेखों की संख्या बहुत कम है। अधिकांश अभिलेख व्यक्तिगत है तथापि उनमें शासकों के नामों और तिथियों का भी उल्लेख किया गया है। सल्तनतकालीन सिक्के भी इतिहास की जानकारी के एक प्रमुख स्रोतहै।

कुतुबुद्दीन ऐंबक (1206–10 ई0)

मुहम्मद गौरी की मृत्यु के बाद चूँकि उसका कोई अपना पुत्र नहीं था, इसलिए लाहौर की जनता ने मुहम्मद गौरी के प्रतिनिधि कुतुबुद्दीन ऐबक को लाहौर पर शासन करने का निमंत्रण दिया। ऐबक ने लाहौर पहुँच कर जुन,1206 ई0 अपना राज्यभिषेक करवाया।

सिंहासन पर बैठने के समय ऐबक को मुहम्मद गौरी के अन्य उत्तराधिकारी गयासुद्दीन मुहम्मद, ताजुद्दीन एल्दौज एवं नासिरूद्दीन कुवाचा के विद्रोह का सामना करना पड़ा। इन विद्रोहियों को शांत करने के लिए ऐबक ने वैवाहिक सम्बन्धों का आधार बनाया आदि। ऐबक को एक स्वतंत्र शासक के रूप में तुर्की राज्य का संस्थापक बना।

ऐबक ने गौरी के भारतीय सल्तनत में 'मालिक एवं सिपहसालार, की हैसियत से कार्य किया। 1208 से 1210 ई0 की अवधि में उसका अधिकांश समय 'दिल्ली सल्तनत' की रूप रेखा बनाने में बीता। उसने स्वतंत्र भारतीय प्रदेश पर स्वतंत्र शासक के रूप में शासन किया।

ऐबक की भारत में राजनीतिक उपलब्धि के विषय में सिर्फ इतना कहा जा सकता है, कि उसने नये प्रदेश जीतने की अपेक्षा जीते हुए प्रदेश की सुरक्षा की ओर विशेष ध्यान दिया।

कुतुबुद्दीन ऐबक को अपनी उदारता एवं दानी प्रवृति के कारण 'लाखबख्श' (लाखों की दानी) कहा गया है। साहित्य एवं स्थापत्य कला में भी ऐबक की दिलचस्पी थी। उसके दरबार मे विद्वान हसन निजामी एवं फख–ए–मुदष्बिर को संरक्षण प्राप्त था। स्थापत्य कला के क्षेत्र में ऐबक के नाम के साथ कुब्वत–उल–इस्लाम, ढाई दिन का झोपड़ा एवं कुतुबमीनार के निर्माण को जोड़ा जाता है। कुतुबमीनार जिसे 'शेख ख्वाजा कुतुबद्दीन बख्तियार काकी' की स्मृति में बनाया गया है, के निर्माण कार्य को शुरू करवाने का श्रेय कुतुबुद्दीन ऐबक को जाता है। 1210 ई0 में लाहौर में चौगान (पोलो) खेलते समय घोड़े से गिरने के कारण ऐबक की मृत्यु हो गई।

इल्तुतमिश (1210–36 ई0)

इल्तुतमिश इल्बारी–वंश से संबद्ध था। आरामशाह को पराजित कर एवं उसकी हत्या कर वह 1210 ई0 में दिल्ली का सुल्तान बन बैठा। इल्तुतमिश की योग्यता से प्रभावित होकर ही तुर्क अमीरों ने उसे दिल्ली बुलाया था। यद्यपि इल्तुतमिश बिना किसी विशेष कठिनाई के सुल्तान बन गया, लेकिन उसके समक्ष अनेक कठिनाइयां थी। उसकी स्थिति अत्यंत ही नाजुक थी। इसके तीन प्रमुख प्रतिद्वन्द्वी थे– गजनी के यल्दूज, सिंध में कुबाचा तथा बंगाल (लखनौती) में अलीमर्दान। राजपुत शासक पुनः दिल्ली सल्तनत को चुनौती दे रहे थे। इल्तुतमिश की आंतरिक परिस्थिति भी असंतोषजनक थी। तुर्की अमीरों का एक वर्ग भी इल्तुतमिश का विरोधी था। राज्य की आंतरिक स्थिति भी चिंताजनक थी। प्रशासनिक व्यवस्था पूरी तरह नष्ट हो चुकी थी। इसकी सुरक्षा एक दृढ़निश्चयी एवं साहसी व्यक्ति ही कर सकता था। इल्तुतमिश ने इस कार्य को पूरा किया। इसी कारण अनेक विद्वान भारत में तुर्की सल्तनत का वास्तविक संस्थापक इल्तुतमिश को ही मानते है।

इल्तुतमिश 1210 – 11 ई0 से 1236 ई0 तक शासन किया। इस काल में उसने सर्वप्रथम अपने विरोधियों की शक्ति को समाप्त कर अपनी स्थिति मजबुत की। यह काल 1210 – 11 ई0 से 1220 ई0 रहा। उसका दूसरा कार्य मंगोल आक्रमणकारियों से राज्य की सुरक्षा करना था। यह काल 1221–27 ई0। तीसरे चरण 1228 – 36 ई0 में उसने अपनी शक्ति का विस्तार किया तथा प्रशासनिक संगठन पर ध्यान दिया।

स्थापत्य कला के अन्तर्गत इल्तुतमिश ने कुतुबद्दीन के निर्माण कार्य को पूरा करवाया। भारत में सम्भवतः पहला मकबरा निर्मित करवाने का श्रेय भी इल्तुतमिश को दिया जाता है। 'अजमेर की मस्जिद' का निर्माण इल्तुतमिश ने ही करवाया था।

रजिया सुल्तान (1236–40 ई0)

रजिया सुल्तान दिल्ली की जनता तथा अमीरों के सहयोग से राज्य सिंहासन पर बैठी और चूँकि रजिया को सुल्तान बनाने का अधिकार सिर्फ दिल्ली के अमीरों को मिला इसलिए अन्य तुर्क अमीर जैसे– निजामुलमुल्क जुनैदी, मालिक अलाउद्दीन जानी, मालिक सैफूद्दीन कूची, आदि रजिया के प्रबल विरोधी बन गये। रजिया ने इजुद्दीन सलारी एवं इजुद्दीन कबीर खाँ को अपनी तरफ करके विद्रोह को सफलता से कुचल दिया।

सुल्तान की शक्ति एवं सम्मान में वृद्धि करने के लिए रजिया ने अपने व्यवहार में परिवर्तन किया। वह पर्दा प्रथा को त्याग कर पुरूषों की तरह कुवा (कोट) एवं कुलाह (टोपी) पहन कर राजदरबार में खुले मुँह से जाने लगी। उसने अपने कुछ विश्वासपात्र सरदारों को उच्च पदों पर नियुक्त किया।

लगभग 1240 ई0 में तबर हिंद के अक्तादार अल्तुनिया द्वारा किये गये विद्रोह को कुचलने के लिए रजिया को तबरहिंद की ओर जाना पड़ा। तुर्क अमीरों ने याकूत की हत्या कर रजिया को बंदी बना लिया तथा दिल्ली के सिंहासन पर इल्तुतमिश के तीसरे पुत्र मुइजुद्दीन वहरामशाह को बैठाया गया। तबर हिंद के अक्तादार अल्तूनिया से विवाह कर रजिया ने पुनः दिल्ली के तख्त को प्राप्त करने का प्रयत्न किया, पर वहरामशाह ने कैथल के समीप दोनो की हत्या कुछ हिन्दू डाकुओं द्वारा करा दी।

रजिया दिल्ली सल्तनत की प्रथम तुर्क महिला शासिका थी। उसने अपने विरोधी गुलाम सरदारों पर पूर्ण नियंत्रण रखा। रजिया की असफलता के कारणों में कुछ इतिहासकारों का मत है, कि 'रजिया का स्त्री होना' ही उसकी असफलता का कारण था, पर कुछ आधुनिक इतिहासकार इस मत से सहमत न होकर गुलाम तुर्क सरदारों की महत्त्वाकांक्षा को ही रजिया की असफलता का कारण मानते है।

मूल्यांकन – रजिया के कार्यो की प्रशंसा अनेक इतिहासकारों ने की है। मिनहाज का कथन है, कि "सुल्तान रजिया एक महान शासिका थी, बुद्धिमान, न्यायप्रिय, उदारचित और प्रजा की शुभचिंतक, समद्रष्टा, प्रजापालक और अपनी सेनाओं की नेत्री। इसलिए इल्तुमिश के उत्तराधिकारियों में वह सबसे योग्य मानी जाती है।

अलाउद्दीन खिजली (1296–1316 ई0)

साम्राज्य विस्तार – अलाउद्दीन साम्राज्यवादी प्रवृत्ति का था। इसने उत्तर भारत के राज्यों को जीत कर उस पर प्रत्यक्ष शासन किया। दक्षिण भारत के राज्यों को अलाउद्दीन ने अपने अधीन कर उनसे वार्षिक कर वसूला।

गुजरात विजय – 1298 ई0 में अलाउद्दीन ने उलुगखाँ एवं नुसरतखाँ को गुजरात विजय के लिए भेजा। अहमदाबाद के निकट 'बघेलराजा कर्ण' और अलाउद्दीन की सेना में संघर्ष हुआ। राजा कर्ण पराजित होकर अपनी पुत्री 'देवल देवी' के साथ भाग कर देवगिरी के शासक रामचन्द्र देव के यहाँ शरण लिया। खिलजी सेना कर्ण की सम्पत्ति एवं उसकी पत्नी कमला देवी को साथ लेकर वापस दिल्ली आया। कालान्तर में अलाउद्दीन ने कमला देवी से विवाह कर उसे अपनी सबसे प्रिय रानी बनाया। यहीं पर नुसरत खाँ ने हिन्दू हिजड़े मलिक काफूर को एक हजार दीनार में खरीदा।

जैसलमेर विजय – सुल्तान की सेना के कुछ घोड़े चुराने के कारण अलाउद्दीन ने जैसलमेर के शासक दूदा एवं उसके सहयोगी तिलक सिंह को 1299 ई0 में पराजित किया।

रणभम्भौर विजय – रणथम्भौर का शासक हम्मीर देव अपनी योग्यता एवं साहस के लिए प्रसिद्ध था। अलाउद्दीन के लिए रणथम्भौर को जीतना इसलिए भी आवश्यक था क्योंकि

रणभम्भौर के जीते बिना पूरे राजस्थान को जीतना कठिन था। साथ ही राणा हम्मीरदेव ने विद्रोही मंगोल नेता मुहम्मद शाह एवं केहब को अपने यहाँ शरण दे रखी थी, इसलिए भी अलाउद्दीन रणथम्भौर को जीतना चाहता था। अतः जुलाई, 1301 ई0 में अलाउद्दीन ने रणभम्भौर के किले को अपने कब्जे में कर लिया। हम्मीर देव वीरगति को प्राप्त हुआ। 'तारीख–ए–अलाई' एवं 'हम्मीर महाकाव्य' में हम्मीर देव एवं उसके परिवार के लोगो का जौहर द्वारा मृत्यु प्राप्त होने का वर्णन करें।

अलाउद्दीन की दक्षिण विजय – अलाउद्दीन के समकालीन दक्षिण भारत की तीन महत्वपूर्ण शक्तियां थीं – 1. देवगिरि के यादव 2. दक्षिण–पूर्व तेलंगाना के काकतीय, और 3. द्वारसमुंद्र के होयसल। दक्षिण भारत के राज्यों को जीतने के उद्देश्य के पीछे धनन की चाह एवं विजय लालसा थी। वह इन राज्यों को अपने अधीन कर वार्षिक कर वसूल करना चाहता था। दक्षिण भारत की विजय का मुख्य श्रेय 'मलिक काफूर' को ही जाता है।

बलबन का राजस्व सिद्धान्त

बलबन दिल्ली सल्तनत का पहला ऐसा सुल्तान था जिसने अपने राजस्व सिद्धान्त की विस्तार पूर्वक व्याख्या की। उसके राजस्व सिद्धान्त के महत्वपूर्ण तत्व थे – राजवंशज अर्थात् राजा को राजवंश से सम्बंधित होना चाहिए। राजस्व को देवी संस्था मानते हुए बलवन ने कहा कि राजा पृथ्वी पर ईश्वर का प्रतिनिधि होता है। अतः उसका स्थान केवल पैगम्बर के पश्चात है। ऐसी स्थिति में उसके द्वारा किया गया कार्य न्याय संगत होता है। बलवन ने उच्च कुल एवं निम्न कुल के व्यक्तियों के बीच अन्तर स्थापित करने को महत्व दिया। बलवन के अनुसार राजस्व के लिए भव्य दरबार एवं दिखावटी मान–मर्यादा का होना आवश्यक है। बलवन ने ईश्वर, शासक तथा जनता के बीच त्रिपक्षीय सम्बंधों को राजस्व का आधार बनाना चाहा। उसने राजा द्वारा निष्पक्ष एवं कठोर किये जाने को महत्व दिया और साथ ही कुरान के नियमों को शासन का आधार बनाया। बलवन ने खलीफा के महत्व को स्वीकार करते हुए अपने द्वारा जारी किये गये सिक्कों पर खलीफा के नाम को अंकित कराया तथा उसके नाम से खुतवे भी पढ़े।

अपने प्रिय पुत्र मुहम्मद की मृत्यु के सदमें को न बर्दाश्त कर पाने के कारण 80 वर्ष की अवस्था में 1286 ई0 में बलवन की मृत्यु हो गई। बलवन शरीयत का कट्टर समर्थक था और वह दिन में 5 बार नमाज पढ़ता था। सुल्तान बनने के बाद उसने शराब तथा भोग विलास को पूर्णतः त्याग दिया। उसने अपने राजदरबार में अनेक कलाकारों एवं साहित्यकारों को संरक्षण प्रदान किया। उसके दरबार में फारसी के प्रसिद्ध कवि अमीर खुसरों एवं अमीर हसन रहते थे। इसके अतिरिक्त ज्योतिषी एवं चिकित्सक मौलाना हमीदुद्दीन मुतरिज, प्रसिद्ध मौलाना बदरूद्दीन एवं मौलाना हिसानुद्दीन भी उसके दरबार में रहते थे।

मुहम्मद बिन तुगलक (1325–1351 ई0)

गाजी मलिक या तुगलक गाजी गयासुद्दीन तुगलक के नाम से 8 सितम्बर, 1320 का दिल्ली के सिंहासन पर बैठा। इसे तुगलक वंश का संस्थापक भी माना जाता है। इसने 29 बार मंगोल आक्रमण को विफल किया।

गयासुद्दीन की मृत्यु के बाद उसका पुत्र जूना खाँ 'मुहम्मद बिन तुगलक' के नाम से दिल्ली की गद्दी पर बैठा। इस तरह सभी सुल्तानों (मध्यकालीन) में मुहम्मद तुगलक सर्वाधिक शिक्षित, विद्वान एवं योग्य व्यक्ति था। अपनी सनक भरी योजनाओं, क्रूर कृत्यों एवं दूसरे के सुख–दुख के प्रति उपेक्षा का भाव रखने के कारण इसे स्वप्रशील, पागल एवं रक्त–पिपासु कहा गया है। बरनी, बदायूँनी, एवं फरिश्ता जैसे इतिहासकारों ने सुल्तान को अधर्मी घोषित किया है।

सिंहासन पर बैठने के बाद तुगलक ने अमीरों एवं सरदारों को विभन्न उपाधियाँ एवं पद प्रदान किया। मुहम्मद बिन तुगलक दिल्ली के सभी सुल्तानों में सर्वाधिक कुशाग्र, बुद्धि सम्पन्न, धर्मनिरपेक्ष, कलाप्रेमी एवं अनुभवी सेनापति था। सर्वप्रथम मुहम्मद तुगलक ने ही बिना किसी भेदभाव के योग्यता के आधार पर पदों का आवंटन किया। मुहम्मद तुगलक के सिंहासन पर बैठते समय दिल्ली सल्तनत कुल 23 प्रांतो में बांटा था।

कार्य – 1. दोआब क्षेत्र में कर वृद्धि (1326–27 ई0) 2. राजधानी परिवर्तन (1326–27 ई0) 3. सांकेतिक मुद्रा का प्रचलन (1329–30 ई0) 4. खुरासन एवं करजिल का अभियान आदि।

अपनी प्रथम योजना के द्वारा मुहम्मद तुगलक ने दोआब के उपजाऊ प्रदेश में कर की वृद्धि कर दी (लगभग 50 प्रतिशत)।

दूसरी योजना के अन्तर्गत राजधानी को दिल्ली से देवगिरि बनाया। काफी आलोचना हुई। नई राजधानी का नाम दौलताबाद रखा।

तीसरी योजना के अंतर्गत तुगलक ने सांकेतिक व प्रतीकात्मक सिक्कों का प्रचलन करवाया।

चौथी योजना के तहत तुगलक के खुरासान एवं कराजिल विजय अभियान का उल्लेख किया जाता है।

बहमनी राज्य

मुहम्मद बिन तुगलक के शासन काल के अंतिम दिनो में दक्कन में अमीरान–ए–सादाह के विद्रोह के परिणामस्वरूप 1347 ई0 में वहमनी साम्राज्य की स्थापना हुई। दक्कन के सरदारों ने दौलतवाद के किले पर अधिकार कर इस्माइल मुख अफगानों को नासिरूद्दीन शाह के नाम से दक्कन का राजा घोषित किया। लेकिन वह बूढ़ा और आराम तलब होने के कारण इस पद के अयोग्य सिद्ध हुआ। शीघ्र ही उसे अधिक योग्य लेता हसन, जिसकी उपाधि जफर

खाँ थी, के पक्ष में गद्दी छोड़नी पड़ी। जफर खाँ को सरदारों ने 3 अगस्त, 1347 को अबुल मुजफ्फर अलाउद्दीन बहमनशाह के नाम से सुल्तान घोषित किया। अलाऊद्दीन हसन ने गुलवर्गा को अपनी राजधानी बनाया तथा उसका नाम बदलकर अहसनावाद कर दिया। उसने साम्राज्य को 4 प्रांतो– गुलवर्गा, दौलतावाद, बरार और बीदर में बांटा। 4 फरवरी 1358 को उसकी मृत्यु हो गयी। इसके उपरान्त सिंहासनआरूढ़ होने वाले शासकों में ताबुद्दीन फिरोज ही सबसे योग्य शासक था।

कलीम उल्लाह – (1526–38 ई0) – यह वहमनी वंश का अंतिम शासक था। उसकी मृत्यु के समय बहमनी राज्य 5 स्वतंत्र राज्यों में बंट गया। इन स्वतंत्र राज्य इस प्रकार है– 1. बीजापुर, 2. अहमदानगर, 3. बरार, 4. गोलकुण्डा और 5. बीदर।

इस तरह बहमनी राज्य में कुल 18 शासक हुए जिन्होंने 175 वर्ष तक शासन किया।

बहमनी राज्य से पृथक होने वाली प्रथम सल्तनत बरार थी। फतहउल्ला हमादशाह, जो हिन्दू से मुसलमान बना था, ने 1484 ई0 में स्वतंत्रता घोषित कर इमादशाही वंश स्थापित किया। 1574 ई0 में बरार को अहमदनगर ने हड़प लिया।

- बीजापुर – बहमनी वंश के पतन के बाद बने 5 नये राज्यों में बीजापुर का विशेष स्थान था। इस स्वतंत्र राज्य की स्थापना 1489 ई0 में यूसुफ आदिलशाह ने की। यह धार्मिक रूप से सहिष्णु एवं न्यायप्रिय शासक था। इसके दरबार में इरान, मध्य एशिया, तुर्किस्तान से विद्वानों का आना – जाना लगा रहता था।

विजयनगर साम्राज्य

विजयनगर का शाब्दिक अर्थ है, 'जीत का शहर'। प्रायः इन नगर को मध्ययुग का प्रथम हिन्दू साम्राज्य माना जाता है। 14वीं शताब्दी में उत्पन्न विजयनगर साम्राज्य को मध्ययुग और आधुनिक औपनिवेशिक काल के बीच का संक्रान्ति–काल कहा जाता है। इस साम्राज्य की स्थापना 1336 ई0 में दक्षिण भारत में तुगलक सत्ता के विरूद्ध होने वाले राजनीतिक तथा सांस्कृतिक आन्दोलन के परिणामस्वरूप संगम पुत्र हरिहर एवं बुक्का द्वारा तुंगभ्रदा के उत्तरी तट पर स्थित अनेगुंडी दुर्ग के सम्मुख की गयी। विजयनगर साम्राज्य का नाम तुंगभद्रा नदी के दक्षिणी किनारे पर स्थित उसकी राजधानी के नाम पर पड़ा। उसकी राजधानी विपुल शक्ति एवं सम्पदा की प्रतीक थी।

विजयनगर साम्राज्य के संस्थापकों की उत्पत्ति के बारे में स्पष्ट जानकारी के अभाव में इतिहासकारों में विवाद है। कुछ 'तेलगू आन्ध्र' अथवा काकतीय उत्पत्ति मानते हैं, कुछ कर्नाटा (कर्नाटक) या होयसाला तथा कुछ काम्पिली उत्पत्ति मानते है। हरिहर और बुक्का ने अपने पिता संगम के नाम पर संगम राजवंश की स्थापना की। संगम राजवंश (1336–1485 ई0)

हरिहर प्रथम (1336–56 ई0) – संगम वंश के प्रथम शासक हरिहर प्रथम ने अनगोन्दी के स्थान पर नवीन नगर विजयनगर को अपनी राजधानी बनाया। उसने वादामी उदयगिरि एवं गूटी में स्थित दुर्गो को शक्तिशाली बनाया। उसने होयसल राज्य को अपने राज्य में मिलाया तथा कदम्ब एवं मदुरा पर विजय प्राप्त की। राज्य में कृषि विकास के लिए कार्य किया। 1356 ई0 हरिहर की मृत्यु हो गई।

बुक्का प्रथम 1356 –77 ई0 – हरिहर का उत्तराधिकारी उसका भाई बुक्का प्रथम सिंहासन पर बैठा। उसने मदुरा को अपने साम्राज्य में शामिल किया। सर्वप्रथम बुक्का ने ही वहमनी और विजयनगर साम्राज्य के मध्य बने विवाद के कारण कृष्णा नदी को बहमनी तथा विजयनगर साम्राज्य के मध्य की सीमा माना। बुक्का ने 'वेदमार्ग प्रतिष्ठापक' की उपाधि ग्रहण की। 1374 ई0 में बुक्का ने चीन में अपना एक दूतमंडल भेजा। 1377 ई0 में उसकी मृत्यु हो गई। हरिहर एवं बुक्का ने राजा व महाराजा की उपाधि ग्रहण नही की थी।

हरिहर (II) – 1377–1404 – विजयनगर राजसिंहासन पर महाराजाधिराज की उपाधि ग्रहण किया। मैसूर, आदि विजय प्राप्त की।

मुगल साम्राज्य

बाबर (1526–30 ई0) – 14 फरवरी, 1483 को फरगना में जहीरूद्दीन मुहम्मद बाबर का जन्म हुआ था। बाबर अपने पिता की ओर से तैमूर का पांचवा वंशज एवं माता की ओर से चंगेज मंगोल नेता का 14वाँ वंशज था। बाबर अपने पिता उमर शेख मिर्जा की मृत्यु के बाद 11 वर्ष की अल्पायु में 1494 ई0 में मावरा उन्नहर की एक छोटी सी रियासत फरगना का शासक बना।

बाबर ने अपने फरगना के शासन काल में 1501 ई0 में समरकंद पर अधिकार किया जो मात्र 8 महीने उसके कब्जे में रहा। 1504 ई0 में बाबर ने काबुल पर अधिकार कर लिया।

बाबर की भारत पर विजय –

पानीपत का प्रथम युद्ध – यह युद्ध सम्भवतः बाबर की महत्वाकांक्षी योजनाओं की अभिव्यक्ति थी। यह युद्ध दिल्ली के सुल्तान इब्राहिम लोदी (अफगान) एवं बाबर के मध्य लड़ा गया। 12 अप्रैल, 1526 को दोनो सेनायें पानीपत के मैदान में आमने सामने हुई पर दोनो के मध्य युद्ध का आरम्भ 21 अप्रैल को हुआ। ऐसा माना जाता है, कि इस युद्ध का निर्णय दोपहर तक ही हो गया। युद्ध में इब्राहिम लोदी बुरी तरह परास्त होने के साथ ही मार दिया गया। इस युद्ध में बाबर ने पहली बार प्रसिद्ध 'तुलगमा युद्ध नीति' एवं तोपखाने का प्रयोग किया। पानीपत के युद्ध में ही बाबर ने अपने दो प्रसिद्ध निशानेबाज उस्ताद अली एवं मुस्तफा की सेवायें ली। इस युद्ध में लूटे गये धन को बाबर ने अपने सैनिक अधिकारियों, नौकरों एवं सगे सम्बंधियों में बांटा। भारत विजय के ही उपलक्ष्य में बाबर ने प्रत्येक काबुल निवासी को एक–एक चांदी के सिक्के उपहार में दिये। अपनी इसी उदारता के कारण उसे 'कलन्दर' की उपाधि दी गई।

पानीपत के युद्ध ने भारत के भाग्य का तो नहीं, किन्तु लोदी वंश क भाग्य का निर्णय अवश्य कर दिया। अफगानों की शक्ति समाप्त नहीं हुई, लेकिन दुर्बल अवश्य हो गयी। युद्ध के पश्चात् दिल्ली तथा आगरा पर ही नहीं बल्कि धीरे–धीरे लोदी साम्राज्य के समस्त भागों पर बाबर ने अधिकार कर लिया।

इस युद्ध की विजय से भारत मे मुगल साम्राज्य की नींव पड़ी।

हुमायूँ (1530–56 ई0)

बाबर की मृत्यु के बाद 30 दिसम्बर 1530 को 23 वर्ष की आयु में हुमायूँ का राज्याभिषेक किया गया।

सही ढंग से नही किया गया साम्राज्य का विभाजन आगे चलकर हुमायूँ के लिए घातक सिद्ध हुआ। उसके सबसे प्रबल शत्रु अफगान थे, किन्तु भाइयों का असहयोग और हुमायूँ की कुछ व्यक्तिगत कमजोरियां उसकी असफलता का कारण सिद्ध हुई।

हुमायूँ का सैन्य अभियान –

कालिंजर पर आक्रमण – (1532 ई0) हुमायूँ को कालिंजर अभियान गुजरात के शासक बहादुर शाह की बढ़ती हुई शक्ति को रोकने के लिए करना पड़ा।

चौसा का युद्ध (26 जून, 1539) – 26 जून, 1539 को हुमायूँ एवं शेरखां की सेनाओं के मध्य गंगा नदी के उत्तरी तट पर स्थित चौसा नामक स्थान पर संघर्ष हुआ। यह युद्ध हुमायूँ अपनी कुछ गलतियों के कारण हार गया। संघर्ष में मुगल सेना की काफी तबाही हुई। हुमायूँ ने युद्ध क्षेत्र से भागकर अपनी जान बचाई। चौसा के युद्ध मे सफल होने के बाद शेरखाँ ने अपने को शेरशाह की उपाधि से सुसज्जित किया, साथ ही अपने नाम के खुतवे पढ़वाने एवं सिक्के ढलवाने का आदेश दिया।

विलग्राम की लड़ाई (17 मई, 1540)– विलग्राम व कभौज में लड़ी गई इस लड़ाई में हुमायूँ के साथ उसके भाई हिन्दाल एवं असकरी भी थे, फिर भी पराजय ने हुमायूँ का पीछा नहीं छोड़ा। इस युद्ध की सफलता के बाद शेरखाँ ने सरलता से आगरा एवं दिल्ली पर कब्जा कर लिया। इस तरह हिन्दुस्तान की राजसत्ता एक बार पुनः अफगानों के हाथ में आ गई।

शेरशाह से परास्त होने के उपरान्त हुमायूँ सिंध चला गया, जहाँ उसने लगभग 15 वर्ष तक घुमक्कड़ों जैसा निर्वासित जीवन व्यतीत किया। इस निर्वासन के समय ही हुमायूँ ने हिन्दाल के आध्यात्मिक गुरू फारसवासी शिया मीर बाबा दोस्त उर्फ 'मीर अली अकबरजामी' की पुत्री हमीदन बेगम से 29 अगस्त, 1541 को निकाह कर लिया।

हुमायुँ द्वारा पुनः राज्य की प्राप्ति – 1545 ई0 में हुमायूँ ने कंधार एवं काबुल पर अधिकार कर लिया। शेरशाह के पुत्र इस्लामशाह की मृत्यु के बाद हुमायूँ को हिन्दुस्तान पर अधिकार का पुनः अवसर मिला। 05 सितम्बर, 1554 में हुमायूँ अपनी सेना के साथ पेशावर पहुँचा। फरवरी, 1555 को उसने लाहौर पर कब्जा कर लिया।

अकबर (1556 – 1605 ई0)

अकबर का जन्म 15 अक्टूबर 1542 ई0 को हुआ। अकबर का बचपन माँ–बाप के स्नेह से रहित ''अस्करी'' के संरक्षण में माहमअन्गा, जौहर सम्सुदीन खाँ एवं जीजी की देख–रेख में कंधार में बीता। 1551 ई0 में मात्र 9 वर्ष की अवस्था में पहली बार अकबर को गजनी की सुबेदारी सौंपी गई। दिल्ली पर अधिकार कर लेने के बाद हुमायूँ ने अकबर को लाहौर का गवर्नर नियुक्त किया। साथ ही अकबर के संरक्षक मुनीम खाँ को अपने दूसरे लड़के मिर्जा हकीम का अंगरक्षक नियुक्त कर तुर्क सेनापति 'वैरम खाँ' को अकबर का संरक्षक नियुक्त किया।

हुमायूँ की मृत्यु के समाचार को सुनकर बैरम खाँ ने गुरूदासपुर के निकट 'कलानौर' में 14 फरवरी 1556 को अकबर का राज्याभिषेक करवा दिया और वह जलालुद्दीन मुहम्मद अकबर गाजी की उपाधि से राजसिंहासन पर बैठा। राज्याभिषेक के समय अकबर की आयु मात्र 13 वर्ष 4 महीने थी।

अकबर के प्रारम्भिक कार्य

1. युद्ध में बन्दी बनाये गये व्यक्तियों के परिवार के सदस्यों को दास बनाये जाने की परम्परा को तोड़ते हुए अकबर ने दास प्रथा पर 1562 ई0 पूर्णतः रोक लगा दिया।

2. मई 1564 ई0 में अकबर ने 'हरम दल' से अपने को पूर्णतः मुक्त कर लिया। इस दल के प्रमुख सदस्य– माहमअन्गा, जीजी अन्गा, आधम खाँ, मुनीम खाँ, शिहाबुद्दीन अहमद खाँ थे। जब तक अकबर ने इस दल के प्रभाव में काम किया तब तक के उसके शासन को 'पेटीकोट सरकार' व 'पर्दा शासन' भी कहा जाता है।

3. अगस्त 1563 में अकबर ने विभिन्न तीर्थस्थानों पर लगने वाले 'तीर्थ यात्रा कर' की वसूली को बन्द करवा दिया।

4. मार्च, 1564 ई0 में अकबर ने 'जजिया कर' जो गैर मुस्लिम जन से व्यक्ति कर' के रूप में वसूला जाता था, को बन्द करवा दिया।

अकबर की धार्मिक नीति

दीन–ए–इलाही–

सभी धर्मो के सार संग्रह के रूप में अकबर ने 1582 ई0 में दीन–ए–इलाही या दैवी एकेश्वरवाद नामक धर्म का प्रवर्तक बन उसे राजकीय धर्म घोषित कर दिया। इस धर्म का अबुल फजल प्रधान पुरोहित था। इस धर्म में दीक्षा प्राप्त करने वाला व्यक्ति अपनी पगड़ी एवं सिर को सम्राट अकबर के चरणों में रखता था। सम्राट उसे उठाकर उसके सिर पर पुनः पगड़ी रखकर 'शब्ढ' (अपना स्वरूप) प्रदान करता था जिस पर 'अल्ला हो अकबर' खुदा रहता था। इस मत के अनुयायी को अपने जीवित रहने के समय ही श्राद्ध भोज देना होता था, मांस खाने पर प्रतिबन्ध था एवं वृद्ध महिला तथा कम उम्र की लड़कियों से विवाह

करने पर रोक थी। स्मिथ ने यह भी लिखा है, कि 'दीन–ए–इलाही अकबर के अहंकार एवं निरंकुशता की भावना की उपज थी।

अबुल फजल ने 'अरस्तु' द्वारा उल्लिखित चार तत्वों आग, हवा, पानी, भूमि को सम्राट अकबर की शरीर संरचना में समावेश माना। अबुल फजल ने योद्धाओं की तुलना 'अग्नि' से, शिल्पकारों एवं व्यापारियों की तुलना 'हवा' से, विद्वानों की तुलना 'पानी' से एवं किसानों की तुलना 'भूमि' से की। सूफी मत में अपनी आस्था जताते हुए अकबर ने 'चिश्ती सम्प्रदाय' को आश्रय दिया।

अकबर ने सभी धर्मो के प्रति अपनी सहिष्णुता की भावना के कारण अपने शासन काल में आगरा एवं लाहौर में ईसाइयों को गिरिजाघर बनवाने की अनुमति प्रदान की। अकबर ने जैन धर्म के जैनाचार्य हरिविजय सूरि को 'जगत गुरू' की उपाधि प्रदान की। सम्राट पारसी त्यौहार एवं सम्वत् में विश्वास करता था। अकबर पर सर्वाधिक प्रभाव हिन्दू धर्म का पड़ा।

अकबर के दरबार के 9 रत्न :– अकबर के दरबार को सुशोभित करने वाले 9 रत्न 1. अबुल फजल 2. टोडरमल 3. फैजी 4. भगवानदास 5. तानसेन, 6. राजा मानसिंह 7. अब्दुर्रहीम खानखाना 8. हकीम हुकाम 9. मुल्ला दो प्याजा।

जहाँगीर

मुहम्मद सलीम (जहाँगीर) का जन्म फतेहपुर सीकरी में स्थित 'शेख सलीम चिश्ती' की कुटिया में भारमल की बेटी 'मरियम उज्जमानी' के गर्भ से 30 अगस्त, 1569 को हुआ था। अकबर सलीम को 'शेखूबाबा' कहा करता था।

1599 ई0 तक सलीम अपनी महत्वाकांक्षा के कारण अकबर के विरूद्ध विद्रोह में संलग्न रहा। 21 अक्टूबर, 1605 को अकबर ने सलीम को अपनी पगड़ी एवं कटार से सुशोभित कर उत्तराधिकारी घोषित किया। अकबर की मृत्यु के आठवें दिन 3 नवम्बर, 1605 को सलीम का राज्यभिषेक नूरूद्दीन मुहम्मद जहाँगीर बादशाह गाजी की उपाधि से आगरे के किले में सम्पन्न हुआ।

जहाँगीर अपने पिता अकबर की भांति उदार प्रवृति का शासक था। बादशाह बनने के बाद 'न्याय की जंजीर' के नाम से प्रसिद्ध सोने की जंजीर को आगरा किले के शाहबुर्ग एवं यमुना तट पर स्थित पत्थर के खम्भे में लगवाया। लोक कल्याण के कार्यो से सम्बंधित 12 आदेशों की घोषणा जहांगीर ने करवायी। ये आदेश थे – 1. 'तमगा' नाम के कर की वसूली पर प्रतिबन 2. सड़को के किनारे सराय, मस्जिद एवं कुओं का निर्माण 2. व्यापारियों के सामान की तलाशी उनके इजाजत के बिना नहीं 4. किसी भी व्यक्ति के मरने के बाद उसकी सम्पत्ति उसके उत्तराधिकारी को, उत्तराधिकारी के अभाव में उस धन को सार्वजनिक निर्माण कार्य पर खर्च किया जाय 5. शराब एवं अन्य मादक पदार्थो की बिक्री एवं निर्माण पर प्रतिबंध 6. दण्डस्वरूप नाक एवं कान को काटने की प्रथा समाप्त। 7. किसी भी व्यक्ति के घर पर अवैध कब्जा के लिए राज्य कर्मचारियों को मनाही, 8. किसानों की भूमि

पर जबरन अधिकार करने पर रोक 9. कोई भी जागीर सम्राट की आज्ञा के बगैर परिणय सूत्र में नहीं बंध सकता था, 10. गरीबो के लिए अस्पताल एवं इलाज के लिए, डाक्टरों की व्यवस्था का आदेश 11. सप्ताह के दो दिन गुरूवार (जहाँगीर के राज्याभिषेक का दिन) एवं रविवार (अकबर का जन्म दिन), को पशुहला पर पूर्ण प्रतिबन्ध था और 12. अकबर के शासन काल के समय के सभी कमचारियों एवं जमींदारों को पुनः उनके पद दे दिये गये।

औरंगजेब

अपने साम्राज्य विस्तार के अन्तर्गत औरंगजेब ने सर्वप्रथम असम को अपने अधिकार में करना चाहा। उसने मीर जुमला को बंगाल का सुबेदार नियुक्त किया और उसे असम को जीतने की जिम्मेदारी सौपी गई। 1 नवम्बर, 1661 ई0 को मीर जुमला ने कूचविहार की राजधानी को अपने अधिकार में कर लिया। असम पर उस समय अहोम जाति के लोग शासन कर रहे थें, मीर जुमला ने अहोमों को परास्त कर 1662 ई0 मे 'गढ़गांव' पर अधिकार कर लिया। अप्रैल 1663 में मीर जुमला की मृत्यु के बाद शाईस्ता खां के बंगाल का सुबेदार बनाया गया। उसने 1663 ई0 में 'चटगांव' को अपने कब्जे में कर लिया परन्तु 1667 ई0 में असम के राजा 'चक्रध्वज' ने राजधानी 'गुवाहाटी' पर कब्जा कर लिया। कालान्तर में असम के आन्तरिक संघर्ष का फायदा उठा कर मुगलों ने 1670 ई0 में 'कामरूप' के अतिरिक्त शेष असम पर पुनः अधिकार कर लिया।

औरंगजेब की दक्षिण नीति

1. अपनी साम्राज्यवादी प्रवृत्ति के कारण दक्षिण के राज्यों को औरंगजेब जीतना चाहता था। शाहजहाँ की भांति दक्कन के प्रति औरंगजेब की नीति भी अंशतः राजनीतिक हित से और अंशतः धार्मिक विचारों से प्रभावित थी।

2. दक्षिण में मराठा शक्ति का शिवाजी के नेतृत्व में एवं वहाँ के शिया सम्प्रदाय के सुल्तानों के सहयोग से दिन–प्रतिदिन उत्थान हो रहा था। इस कारण भी औरंगजेब ने दक्षिण के राज्यों के कुचलना चाहा। इस मात का समर्थन आधुनिक इतिहासकार करते है।

औरंगजेब के विरूद्ध हुए महत्वपूर्ण विद्रोह –

औरंगजेब की नीतियों के विरूद्ध हुए विद्रोहों के पीछे महत्वपूर्ण कारण 'जाटो का विद्रोह था किसानों एवं भूमि से जड़े हुए विवाद, सिक्खों के विद्रोह के पीछे धार्मिक कारण, राजपूतों के विद्रोह के पीछे उत्तराधिकार की समस्या एवं अफगानों के विद्रोह के पीछे एक अलग अफगान राज्य के गठन की भावना कार्य कर रही थी।

मुगल साम्राज्य के पतन के कारण

मुगल साम्राज्य जिसने अपनी विशेषताओं से सम्पूर्ण मध्य युगीन भारत को प्रभावित किया। मुगल साम्राज्य का पतन एक कारण से नहीं हुआ। इसके कई कारण थे, जो इस प्रकार है:–

1. मुगल साम्राज्य का पतन औरंगजेब के व्यक्तित्व एवं कार्य नीतियों के कारण हुआ। इसके अन्तर्गत उसकी धार्मिक नीति, दक्कन नीति, एवं राजपूत नीति का महत्वपूर्ण योगदान है।

2. अयोग्य उत्तराधिकारियों का होना।

3. दरबार में अधिक गुटबन्दी।

4. उत्तराधिकार का कोई निश्चित नियम न था।

5. दक्कन के शिवाजी का जननायक के रूप में उभरना भी मुगल साम्राज्य के पतन का एक कारण बना।

6. मुगल साम्राज्य में महत्वपूर्ण भूमिका के निर्वाह के बाद भी मनसबदारी व्यवस्था दोषमुक्त न रही। यह भी पतन का कारण रहा।

7. औरंगजेब की दक्कन नीति की असफलता के कारण हुए निरन्तर युद्धों ने मुगलों साम्राज्य को आन्तरिक रूप से खोखला कर दिया। आर्थिक कमजोरी भी पतन का एक कारण थी।

8. नादिरशाह एवं अहमदशाह अब्दाली के आक्रमणों ने तो जैसे मुगल साम्राज्य के ताबूत में अंतिम कील ठोकने का कार्य किया।

9. मुगल साम्राज्य की विशालता साथ ही औरंगजेब के बाद कुशल शासकों का अभाव भी पतन का एक कारण बना।

10. यूरोपीय कम्पनियों जैसे अंग्रेज, डेन, डच, फ्रांसीसी आदि का प्रवेश भारत में हो चुका था। अन्ततः अंग्रेजों ने भारत मे सर्वोच्यता स्थापित करते हुए मुगल सम्राट को अंतिम रूप से भारत से बाहर खदेड़ दिया।

भक्ति आन्दोलन

मध्य काल में भक्ति आन्दोलन के सूत्रपात एवं प्रचार–प्रसार के महत्वपूर्ण कारण निम्नलिखित थे–

1. मुस्लिम शासकों के वर्बर शासन से कुंठित एवं उनके अत्याचारों से त्रस्त हिन्दू जनता ने ईश्वर की शरण में अपने को अधिक सुरक्षित महसूस कर भक्ति मार्ग का सहारा लिया।

2. हिन्दू एवं मुस्लिम जनता के आपस में सामाजिक एवं सांस्कृतिक सम्पर्क से दोनो के मध्य सद्भाव, सहानुभूति एवं सहयोग की भावना का विकास हुआ। इस कारण से भी भक्ति आन्दोलन के विकास में सहयोग मिला।

3. हिन्दूओं ने सूफियों की तरह एकेश्वरवाद मे विश्वास करते हुए ऊँच–नीच एवं जाति–पात का घोर–विरोध किया।

4. शंकराचार्य का ज्ञान मार्ग व अद्वैतवाद अब साधारण जनता के लिए बौधगम्य नहीं रह गया।

5. मुस्लिम शासकों द्वारा आये दिन मूर्तियों एवं मंदिरों को नष्ट एवं अपवित्र कर देने के कारण बिना मूर्ति एवं मंदिर के ईश्वर की आराधना के प्रति लोगों का झुकाव बढ़ा जिसके लिए उन्हें भक्ति मार्ग का सहारा लेना पड़ा।

मध्य काल में शक्ति आंदोलन की शुरूआत सर्वप्रथम दक्षिण के आलवार भक्तों द्वारा की गई। दक्षिण भारत से उत्तर भारत में बारहवीं शताब्दी के प्रारम्भ में रामानन्द द्वारा यह आंदोलन लाया गया। भक्ति आंदोलन का महत्वपूर्ण उद्देश्य था– हिन्दू धर्म एवं समाज में सुधार तथा इस्लाम एवं हिन्दू धर्म में समन्वय स्थापित करना। अपने उद्देश्यों में यह आंदोलन काफी सफल रहा। शंकराचार्य के 'अद्वैतदर्शन' के विरोध में दक्षिण में वैष्णव संतों द्वारा 4 मतों की स्थापना की गई थी जो निम्नलिखित है– 1. विशिष्टद्वैतवाद की स्थापना 12वीं सदी में रामानुजाचार्य, 2. द्वैतवाद की स्थापना 13वीं सदी में मध्वाचार्य, 3. शुद्धाद्वैतवाद की स्थापना 13वीं सदी में विष्णुस्वामी, 4. द्वैताद्वैतवाद की स्थापना 13वीं सदी में निम्बकायार्य ने की। इन संतों की प्रवृत्ति सगुण भक्ति की थी। इन्होंने राम, कृष्ण, शिव, हरि आदि के रूप में आध्यात्मिक व्याख्यायें प्रस्तुत की। 14वीं एवं 15वीं शताब्दी में भक्ति आंदोलन का नेतृत्व कबीरदास के हाथों में था। इस समय रामानन्द, नामदेव, कबीर, नानक, दादू रविदास, तुलसीदास एवं चैतन्य महाप्रभु इन हाथों में बागडोर थी।

सूफी आंदोलन

सल्तनत–युग में इस्लाम–धर्म में जो सबसे महत्वपूर्ण घटना घटी वह थी सूफीवाद या सूफी–सम्प्रदाय का उदय। सूफीवाद का विकास ईरान में हुआ। वहाँ से यह भारत भी आया। 13–14वीं शताब्दी तक भारत में इस्लाम धर्म के साथ ही सूफी–सम्प्रदाय भी व्यापक तौर पर स्थापित हो चुका था।

सूफी–दर्शन – सूफीवाद दार्शनिक सिद्धांत पर आधारित था। सूफीवाद ने इस्लामी कट्टरपन को त्याग दिया एवं धार्मिक रहस्यवाद को स्वीकार सूफी इस्लाम–धर्म के कर्मकाण्डों एवं कट्टरपंथी विचारों के विरोधी थे, फिर भी इस्लाम धर्म एवं कुरान की महत्व को वे स्वीकार करते थे। सूफी संत एकेश्वरवाद में विश्वास करते थे। उनका मानना था कि, ''ईश्वर एक है, सभी कुछ ईश्वर में हैं, उनके बाहर कुछ नहीं और सभी कुछ का त्याग कर प्रेम के द्वारा ईश्वर को प्राप्त किया जा सकता है।'' सूफी धार्मिक पवित्रता पर अत्याधिक बल देते थे। सूफियों के मध्य भी अनेक सम्प्रदाय थे, जिनमें बाह्म रूप से कुछ अंतर था, परंतु आंतरिक तौर पर सभी धार्मिक पवित्रता में विश्वास रखते थे।

प्रमुख सूफी संत – ख्वाजा मुइनुद्दीन चिश्ती, शेख निजामुद्दीन औलिया, बाबा फरीद आदि का उल्लेख किया जा सकता है।

ख्वाजा मुइनुद्दीन चिश्ती – ख्वाजा मुइनुद्दीन चिश्ती मूलतः मध्य एशिया के निवासी थे। मुहम्मद गोरी की सेना के साथ ये 1192 ई0 में भारत आए। भारत में 'चिश्ती सिलसिला' के संस्थापक वही थे। लाहौर और दिल्ली के पश्चात् उन्होंने अजमेर को अपना केन्द्र बनाया, जहाँ इनके असंख्य अनुयायी बन गए।

निजामुद्दीन औलिया – निजामुद्दीन औलिया गयासुद्दीन और मुहम्मद–बिन–तुगलुक के समकालीन थे। अपनी गतिविधियों का केन्द्र इन्होनें दिल्ली को ही बनाया। इन्होंने हिन्दू–मुस्लिम–एकता पर बल दिया एवं सामाजिक सुधार के क्षेत्र में महत्वपूर्ण कार्य किए।

हिंदूधर्म में मध्यकालीन भक्ति आंदोलन का जो महत्व है, वही महत्व इस्लाम–धर्म में सूफियों का है। सूफी संतों ने इस्लाम–धर्म को गतिशील एवं उदार बनाकर हिंदू–मुस्लिम एकता को प्रोत्साहित किया। इन लोगो ने साहित्य, भाषा, दर्शन और नृत्य–संगीत के विकास को भी प्रभावित किया।

सल्तनतकालीन प्रशासनिक व्यवस्था

सल्तनत काल में भारत में एक नई प्रशासनिक व्यवस्था की शुरूआत हुई जो मुख्य रूप से अरब–फारसी पद्धति पर आधारित थी। सल्तनत काल में प्रशासनिक व्यवस्था पूर्ण रूप से इस्लामिक धर्म पर आधारित थी। उलेमाओं की प्रशासन में महत्वपूर्ण भूमिका होती थी। 'खलीफा' इस्लामिक संसार का पैगम्बर के बाद का सर्वोच्च नेता होता था। दिल्ली सल्तनत के सुल्तानों में अधिकांश ने अपने को खलीफा का 'नाइव' कहा। अलाउद्दीन खिलजी ने अपने को खलीफा का नाइव नहीं माना। मुबारक खिलजी पहला ऐसा सुल्तान था जिसने खिलाफत के मिथक को तोड़कर स्वयं को खलीफा घोषित किया। मुहम्मद तुगलक ने अपने शासन काल के प्रारम्भ में खलीफा को मान्यता नहीं दी, पर शासन के अन्तिम चरण मे उसने खलीफा को मान्यता प्रदान कर दी।

सुल्तान– सुल्तान की उपाधि तुर्की शासकों द्वारा प्रारंभ की गयी/महमूद गजनवी पहला शासक था जिसने 'सुल्तान' की उपाधि धारण की। सुल्तान केन्द्रीय प्रशासन का मुखिया होता था। राज्य की पूरी शक्ति उसमें केन्द्रित थी। न्यायापालिका एवं कार्यपालिका पर सुल्तान का पूरा नियन्त्रण था। सुल्तान द्वारा चुना गया उत्तराधिकारी यदि अयोग्य है, तो ऐसी स्थिति में सरदार नये सुल्तान का चुनाव करते थे। सुल्तान सेना का सर्वोच्च सेनापति एवं न्यायालय का सर्वोच्च न्यायधीश होता था। सुल्तान शरीयत के अधीन ही कार्य करता था।

अमीर– सल्तनत काल में सभी प्रभावशाली पदों पर नियुक्त व्यक्तियों की सामान्य संज्ञा अमीर थी। अमीरों का प्रभाव सुल्तान पर होता था। अमीरों का प्रशासन में महत्वपूर्ण योगदान होता था। लोदी वंश के शासन काल में अमीरों का महत्व अपने चरमोत्कर्ष पर था।

मंत्रिपरिषद– सत्ता का प्रधान सुल्तान होता था फिर भी विभिन्न विभागों के कार्यो के कुशल संचालन हेतु उसे एक मंत्रिपरिषद की आवश्यकता पड़ती थी, जिसे सल्तनत काल में 'मजलिस–ए–खलवत' कहा जाता था। इसका सलाह मानने के लिए सुल्तान बाध्य नहीं होता था। मंत्रिपरिषद् में 4 मंत्री महत्वपूर्ण थे, वे निम्न है–

1. वजीर (प्रधानमंत्री) – सर्वप्रमुख होता था और अधिक अधिकार होते थे।

2. दीवान–ए–आरिज– आरिज–ए–मुमालिक सैन्य विभाग का प्रमुख था।

3. दीवान–ए–इंशा– यह सुल्तान की घोषनााओं एवं पत्रों का मसविदा तैयार करता था।

4. दीवान–ए–रसालत– इस विभाग के कार्यो के बारे में विवाद है। कुछ इतिहासकारों के अनुसार यह धर्म विभाग से सम्बन्धित था।

सल्तनतकालीन अर्थ–व्यवस्था

सल्तनत काल में भारतीय अर्थ–व्यवस्था में महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए। प्रो0 हबीब के अनुसार पहले की 'सामंती अर्थ–व्यवस्था' तुर्क–अफगान–काल में 'शहरी अर्थ–व्यवस्था' में परिणत हो गई।

कृषि और पशुपालन – कृषि भारतीयों की जीविका का मुख्य आधार था। भारत की अधिकांश जनसंख्या कृषक ही थी। सल्तनत काल में कृषि–क्षेत्र का भी विकास हुआ। अलाउद्दीन खलजी, मुहम्मद–बिन–तुगलुक एवं फीरोज तुगलुक ने कृषि के विकास के लिए प्रयास किए। फीरोज ने सिंचाई के लिए अनेक नहरों का प्रबंध करवाया। अनाज के अतिरिक्त किसान फल–फूल भी उपजाते थे। कृषि के साथ–साथ पशुपालन भी होता था। पालतू पशुओं में गाय, बैल, बकरी, भेड, सूअर, घोड़े, ऊँट आदि।

उद्योग–धंधों का विकास– इस युग में अनेक प्रकार के उद्योग–धंधें का विकास हुआ। कारिगरों के एक दक्ष वर्ग का उदय हुआ, जिसने औद्योगिक केन्द्रों एवं नगरों में रहकर उद्योग–धंधों को विकसित किया। इस समय वस्त्र–उद्योग, धातु–उद्योग और चर्म–उद्योग के अतिरिक्त कागत, चीनी, शीशा तथा काष्ठ उद्योग का विकास हुआ। सूरत, पटना, बनारस, दिल्ली, आगरा, बंगाल आदि वस्त्र उद्योग के प्रमुख केन्द्र थे।

तकनीकी विकास– सल्तनत–युग में तकनीकी के क्षेत्र में अनेक विकास हुए। इनके कारण उद्योग–धंधों एवं व्यापार–वाणिज्य की प्रगति में सहायता मिली।

व्यापार–वाणिज्य की प्रगति– सल्तनत–काल में आंतरिक एवं विदेशी व्यापार का भी विकास हुआ। इब्नेबतूता दिल्ली को संसार की सबसे बड़ी व्यापारिक मंडी मानता है। भारत का चीन, ईरान, अरब, मध्य एशिया, यूरोप एवं अफ्रीका से व्यापारिक संबंध था।

नगरों का उदय – अनेक नगरों का उदय इस समय हुआ। पूरे देश में औद्योगिक, व्यापारिक एवं प्रशासनिक नगरों का जाल सा बिछ गया। अनेक बंदरगाहों का भी तटीय क्षेत्रों में उदय हुआ। इय समय के प्रमुख नगरों में दिल्ली, आगरा, लाहौर, मुल्तान, ढाका, पटना, बनारस, ग्वालियर आदि का उल्लेख किया जाता है। नगरों में व्यापारियों, कारिगरों और प्रशासनिक अधिकारियों का दबदबा था।

इस युग में आर्थिक संपन्नता का युग था, परन्तु इस आर्थिक संपन्नता का अधिकांश उपयोग कुलीन वर्गवाले ही करते थे। सामान्य लोग को लाभ नहीं मिल पाया। इस कारण उनकी स्थिति दयनीय बनी ही रही।

मुगलकालीन शासन व्यवस्था

मुगलकालीन प्रशासन के बारे कुछ महत्वपूर्ण कृतियों से जानकारी मिलती है। ये कृतियाँ है– आईन–ए–अकबरी, अकबरनामा, तबकाते अकबरी, आदि। इसके अतिरिक्त कुछ विदेशी पर्यटक जैसे रो, हॉकिन्स और टेरी आदि ने जानकारी दी।

मुगलकालीन शासकों में बाबर, हुमायूँ, औरंगजेब ने अपने शासन का आधार कुरान को बनाया, परन्तु इस परम्परा का विरोध करते हुए अबकर ने अपने को साम्राज्य की समस्त जनता का शासक बताया, उसने राजा को मनुष्यों में उत्तम एवं पृथ्वी पर ईश्वर की छाया व प्रतिनिधि बताया।

मंत्रिपरिषद– सम्राट को प्रशासन की गतिविधियों को भली भांति संचालित करने के लिए एक मंत्रिपरिषद की आवश्यकता होती थी, बाबर के काल में वजीर पद काफी महत्वपूर्ण था परन्तु कालान्तर में यह पद महत्वहीन हो गया। वजीर राज्य का प्रधानमंत्री होता था। अकबर के समय प्रधानमंत्री को 'वकील और वित्तमंत्री को 'वजीर' कहते थे।

वकील– सम्राट के बाद शासन के कार्यो को संचालित करने वाला सबसे महत्वपूर्ण अधिकारी वकील था।

दीवान या वजीर – फारसी मूल के शब्द दीवान का नियंत्रण राजस्व एवं वित्तीय विभाग पर होता था।

मीर बख्शी– इसके पास ''दीवानी आरिज' के समस्त अधिकार होते थे। मुगलों की 'मनसबदारी व्यवस्था' के कारण यह पद और भी महत्वपूर्ण हो गया था।

सद्र–उस–सद्र या सुदूर– यह धार्मिक मामलों, धार्मिक धन–सम्पत्ति एवं दान विभाग का प्रधान होता था। 'शरीयत' की रक्षा करना इसका मुख्य कर्त्तव्य था।

मीर समा– सम्राट के घरेलू विभागों का प्रधान होता था। यह सम्राट के दैनिक व्यय, भोजन एवं भण्डार का निरीक्षण करता था।

दरोगा–ए–तोपखाना– यह बन्दूकचियों एवं शाही तोपखाने का प्रधान होता था।

दरोगा–ए–डाक चौकी– यह सूचना एवं गुप्तचर विभाग का प्रधान होता था यह राज्य की हर सूचना बादशाह तक पहुँचाता था।

अन्य पदाधिकारी– मुस्तौफी– महालेखाकार, मीर बहरी– जल सेना का प्रधान, मीर–बर्र–वन अधीक्षक, मुशरिफ–राजस्व सचिव, मीर–ए–माल– राज्यभत्ताधिकारी आदि।

मुगल काल में शिक्षा

मुगलकालीन शासकों ने शिक्षा के प्रचार–प्रसार को महत्व दिया। इस समय की मस्जिदों में 'मक्तव' की व्यवस्था होती थी जिसमें लड़के–लड़कियाँ प्रारंभिक शिक्षा ग्रहण करते थे। बाबर के समय में एक विभाग 'शुहरते आम होता था जो स्कूल–कालेजों का निर्माण करवाता था।

हुमायूँ ज्योतिष एवं भूगोल का ज्ञाता था। उसने दिल्ली के पुराने किले के 'शेर मण्डल' नाम के हाल में अपने व्यक्तिगत पुस्तकालय की स्थापना की थी। हुमायूँ को पुस्तकों में बड़ी रूचि थी, वह सदैव अपने साथ एक चुना हुआ पुस्तकालय लेकर चलता था। हुमायूँ द्वारा ईरान से भारत वापस आने के उपरांत भारी संख्या में ईरानी प्रवासियों का भारत में आगमन हुआ जिन्हें भारत में उपयुक्त साहित्यिक वातावरण प्राप्त हुआ, जो उन्हें ईरान में प्राप्त नहीं था। उन्होनें भारतीय साहित्यिक मनीषियों के साथ एक पृथक भारतीय शैली (सबक–ए–हिन्दी) का विकास किया। श्लेष, तिथिबन्ध्र व्यंग्य, मूल उपमाएँ तथा प्रत्यय आदि इस शैली की प्रमुख विशेषताएँ थी।

शिक्षा के क्षेत्र अकबर द्वारा किया गया प्रयास निःसंदेह स्मरणीय है। बदायूँनी के अनुसार 'अकबर ने गुजरात को जीतने के बाद अपने पुस्तकालय को अनेकों दुर्लभ पुस्तकों से भर दिया। उसने एक अनुवाद विभाग की स्थापना की। अकबर के पुस्तकालय की प्रशंसा में स्मिथ ने कहा कि अकबर का पुस्तकालय उस काल व उसके पूर्व के काल का अद्वितीय पुस्तकालय था। इसके अतिरिक्त अकबर ने फतेहपुर सीकरी, आगरा एवं अन्य स्थानों पर अनेक खानकाह एवं मदरसों की स्थापना की। फतेहपुर सीकरी मुस्लिम शिक्षा का मुख्य केन्द्र था। अकबर के समय में फतेहपुर सीकरी में अब्दुल कादिर शेख, फैजी, निजामुद्दीन जैसे विद्वान रहते थे।

अकबर का शासन काल भारत में फारसी साहित्य के 'पुनर्जागरण' का काल था। 'आइन–ए–अकबरी' से अकबर के दरबार के 59 महान फारसी कवियों के नाम मिलते हैं। अकबर का राजकवि अबुल फैजी अमीर खुसरों से मुगल युग तक के भारतीय फारसी साहित्य का महानतम कवि था।

'मनसबदारी प्रथा'

मुगलकालीन सैन्य व्यवस्था पूर्णतः मनसबदारी प्रथा पर आधारित थी। वैसे अरबी भाषा के शब्द 'मनसब' का शाब्दिक अर्थ है 'पद'। अकबर द्वारा आरम्भ की गयी इस व्यवस्था में उन व्यक्तियों को सम्राट द्वारा एक पद प्रदान किया जाता था, जो शाही सेना में होते थे। दिये जाने वाले पद ाके 'मनसब' एवं ग्रहण करने वाले को 'मनसबदार' कहा जाता था। मनसब प्राप्त करने के उपरान्त उस व्यक्ति का शाही दरबार में प्रतिष्ठा, स्थान व वेतन का ज्ञान होता था। ऐसा कहा जाता है, कि मनसबदारी व्यवस्था मंगोल नेता चंगेज खाँ की 'दशमलव प्रणाली' पर आधारित थी।

'पद' या 'श्रेणी' के अर्थ वाले मनसब शब्द का प्रथम उल्लेख अकबर के शासन के 11 वर्ष में मिलता है, परन्तु मनसब के जारी होने का उल्लेख 1577 ई0 में मिलता है। मनसबदार के पद के साथ 1594–95 ई0 से 'सवार' का पद भी जुड़ने लगा। इस तरह अकबर के शासनकारल में मनसबदारी प्रथा कई चरणों से गुजर कर उत्कर्ष पर पहुँची।

अकबर के समय में सबसे छोटा मनसब 10 एवं सबसे बड़ा मनसब 10,000 का होता था, परन्तु कालान्त में यह बढ़कर 12,000 हो गया। शाही परिवार के शहजादों को 5000 से ऊपर का मनसब मिलता था। मनसब प्राप्त करने वाले मुख्यतः 3 वर्गो में विभक्त थे– 10 से 500 तक मनसब प्राप्त करने वाले 'मनसबदार' कहलाते थे। 500 से 2500 तक मनसब प्राप्त करने वाले 'उमरा' कहलाते थे एवं 2500 से ऊपर मनसब प्राप्त करने वाले व्यक्ति 'अमीर–ए–उम्दा' या 'अमीर–ए–आजम' कहलाते थे।

'आइनेकबरी' में 66 मनसबों का उल्लेख किया गया है, किन्तु व्यवहार में 33 मनसब ही प्रधान किये जाते थे।

मनसबदारों को वेतन नकद व जागीर दोनो में ही देने की व्यवस्था थी। कार्यकाल के समय मनसबदारों के मरने पर उसकी सम्पत्ति को जप्त कर लिया जाता था। मनसबदारों की जागीरें एक प्रांत से दूसरे प्रांत में स्थानान्तरित कर दी जाती थी। अकबर के समय कुल मनसबदारों की संख्या लगभग 1803 थी जो औरंगजेब के समय में बढ़कर 14,449 हो गई। अकबर के शासन काल में अंतिम चरण में यह नियम बनाया गया कि, किसी भी मनसबदार का सवार पद उसके जात पद से अधिक नहीं हो सकता।

मुद्रा, कृषि, खनिज, उद्योग, व्यापार

अबुल फजल की 'आईने अकबरी' में रबी की 16 या खरीफ की 25 फसलों का उल्लेख मिलता हैं।

मुगलकालीन प्रमुख फसलें

फसलें ———————— उत्पादन क्षेत्र

गेहूँ ———————— पंजाब, उत्तर–प्रदेश, बिहार आदि

चावल ———————— मद्रास, कश्मीर आदि

नील ———— उत्तर एवं दक्षिण भारत के कई भागों मुलतः यमुना घाटी एवं मध्य भारत में

गन्ना ———————— उत्तर पद्रेश, बंगाल एवं बिहार

अफीम ———————— मालवा एवं बिहार

शराब, कपास एवं शोरा का उत्पादन लगभग पूरे देश में होता था।

खनिज – खनिज पदार्थो में सोना कुमायूँ पर्वत एवं पंजाब की नदियों से, लोहा देश के अनेक भागो से, तांबा राजस्थान एवं मध्य भारत से, 'संगमरमर' जयपुर एवं जोधपुर से तथा 'हीरा' गोलकुण्डा एवं छोटानागपुर की पहाड़ियों में पाया जाता था।

उद्योग – उद्योग के क्षेत्र में सर्वाधिक विकसित रूई का उत्पादन एवं उससे निर्मित सूती वस्त्र निर्माण उद्योग था। सूती वस्त्र निर्माण के महत्वपूर्ण केन्द्र आगरा, बनारस, बुरहानपुर, पाटन, जौनपुर, बंगाल, मालवा आदि थे। मुल्तान फूलदार कालीनों एवं कश्मीर ऊनी कालीनों के लिए प्रसिद्ध था।

व्यापार – व्यापार की स्थिति मुगल काल में बेहतर थी। इस समय फ्रांस से ऊनी वस्त्र, इटली एवं फारस से रेशम, फारस से कालीन, मध्य एशिया तथा अरब से अच्छी नस्ल के घोड़े, चीन से कच्चा रेशम एवं सोना तथा चांदी का आयात होता था। भारत की प्रमुख निर्यातक वस्तुए सूती कपड़ा, नील, अफीम, मसाले, चीनी, शोरा, काली मिर्च नमक आदि।

मुद्रा :– मुगल काल में मुख्य से तीन प्रकार के धातु के सिक्के 'सोने की मुहर', 'चाँदी का रूपया', एवं तांबे के दाम प्रचलन मे थे। 'चाँदी का रूपया', ही मुगलकालीन अर्थव्यवस्था का आधार था, यह 178 ग्रेन का था। चाँदी के रूपये का प्रचलन सर्वप्रथम शेरशाह सूरी ने किया। अकबर ने 'जलाली' नाम का चौकोर आकार का रूपया चलाया।

****